

संतोष का महत्व

तृष्णा का दुःख – महात्मा गाँधी लिखते हैं – “यह वसुंधरा अपने सारे पुत्रों को धन-धन्य दे सकती है, किंतु ‘एक’ भी व्यक्ति की तृष्णा को पूरा नहीं कर सकती।” यह पंक्ति अत्यंत मार्मिक है। इसे पढ़कर यह रहस्य उद्घाटित होता है कि मनुष्य का असंतोष उसकी समस्याओं का मूल है। उसकी प्यास कभी शांत नहीं होती।

दुःख का कारण – वासनाएँ – मनुष्य जन्म से लेकर मृत्यु तक विविध वस्तुओं के पीछे पागल हुआ घूमता है। कभी उसे खिलौने चाहिए, कभी खेल, कभी धन चाहिए, कभी यश, कभी कुर्सी चाहिए, कभी पद। इक सबके आकर्षण का कारण है – इसकी प्यास। मनुष्य इस प्यास को त्याग नहीं सकता। इस प्यास के मारे वह जीवन-भर इनकी गुलामी सहन करने को तैयार हो जाता है। वास्तव में उसकी गुलामी का कारण उसका अज्ञान है। उसे पता ही नहीं है कि वस्तुओं में रस नहीं है, अपितु इच्छा और इच्छा-पूर्ति में रस है। जिस दिन उसे अपाने इस मनोविज्ञान का बोध हो जाएगा, तब भी उससे यह गुलामी छोड़ी नहीं जा सकेगी, क्योंकि इच्छाएँ अभुक्त वेश्याएँ हैं जो मनुष्य को पूरी तरह पि डालती हैं और फिर भी जवान बनी रहती हैं।

वासनाओं का समाधान – इस प्रश्न का उत्तर गीता में दिया गया है – ज्ञान, वैराग्य और अभ्यास से मन की वासनाओं को शांत क्या जा सकता है। जब वस्तुएँ व्यर्थ हैं तो उन्हें छोड़ना सीखें। सांसारिक पदार्थ जड़ हैं, नश्वर हैं तो उनकी जगह चेतक जगत को अपनाना सीखें। परमात्मा का ध्यान करें। मन बार-बार संसार की ओर जाए तो साधनापूर्वक, अभ्यासपूर्वक उसे परमात्मा की ओर लगाएँ। इन्हीं उपायों से मन में संतोष आ सकता है। संतोष से स्थिरता आती है और स्थिरता से आनंद मिलता है। वास्तविक आनंद भी वही है जो स्थिर हो, चंचल न हो। सांसारिक सुख चंचल हैं, जबकि त्यागमय आनंद स्थायी हैं। अतः यह सच है कि ‘जब आवै संतोष धन, सब धन धुरि समान।’